विभिन्न घरानों में रसभाव - For Lalit Kala Kendra, Pune University – 24/02/2010

By Satyasheel Deshpande,
58/B. Krishna Nivas, Walkeshwar Road, Mumbai 400006.
Email: satyasheeld@yahoo.com. Phone: 022-23645698

मैं कृतज्ञ हूँ के ललित कला केंद्र ने आज मुझे 'विभिन्न घरानों में रसभाव' इस विषय पर बतियाने को आमंत्रित किया है | मैं मेरे विचार, जिस हिंदी भाषा में यह संगीत गाया जाता है, उस ही भाषा में व्यक्त करना उचित और हितकारी समझता हूँ |
पहले ही कहना चाहूँगा कि भ्रमर जिस भाँती कुछ क्षण-पलों के लिए ही रसास्वादन करता है उस तरह कला में रस कि अनुभूति कुछ ही उत्कट पलों में पाई जाती है | रस निचोड़ते, निकलते रहना, वह भी गाकर, और वह भी दो घंटों के लिए, यह अमानवी और अस्वाभाविक अवस्था है |

संगीत प्रवाहि आकारतत्व है |
चित्रफलक की भाँती वह स्थिर नहीं |
राग या बंदिश के पट उपज अंग से खोलकर ही उसमे सुप्त सौंदर्य की पूर्ण अनुभूति प्राप्त होती है, उसमे सुप्त संकेतों की संदिग्धता हटती है, पिया मिल जाते हैं – कभी सांगीतिक यथार्थ की नापतौल करते हुए, तो कभी स्वर्जन्य किसी और ही भाव में विभोर |

प्रात्यक्षिक:

- कन्हैय्या ने घेर लई
- बिजुरिया चमकन लागी (उदहारण)
- नी मैं मसलत – तोड़ी (उदहारण)

गायक का मिजाज़, उसपर हुए संस्कार और तालीम का, उसके भौगोलिक – सामजिक – सांस्कृतिक परिस्थिति से बनता है | उसके ब्राह्मण, तवाइफ़ या musicologist होने से बनता है |

पंजाब के गवैयों की एक कहावत है: 'गाना पंजाब में ज्वान था, ग्वालिअर में बूढा, और महाराष्ट्र में उसकी हड्डी पसली रह गई !' | यह बात फिर से विभिन्न प्रान्तों के लोगों की भौगोलिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्थितीयों पर कटाक्ष करती है | गौर करने कि बात है कि यह संगीत भारत के दो-तिहाई हिस्सों में गया जाता है | विभिन्न मिजाजों के साथ साथ अलग अलग बोली भाषाओँ कभी इस संगीत के भावपक्ष को समृद्ध बनाने में योगदान है |

- नैन सो नैन (प्रात्यक्षिक)

घरानों के संदर्भ में, एक बात शायद इतनी स्पष्टता से नहीं कही गई है, कि किसी भी संगीत में, किसी विविक्षित समय में अभिव्यक्ति की, बढ़त की तीन प्रमुख धाराएं सुनाई देती हैं | किसी गायकी में लय में गूंथी हुई शब्दों की लरज, लहजा और लढत अपनाई जाती है, जिसे मैं लयक्रीडा कहेने से शब्दक्रीडा कहना उचित समझूंगा |

किसी गायकी में सुर की तासीर, पीर और गहराई में जाने के लिए सुविधा हो, इसलिए उस गायकी में बनने वाले स्वरवाक्य, स्वराकृतियों में शब्दकरीडा और जटिलता का अभाव होता है | सीधे साधे, मासूम स्वरवाक्य होते हैं |

किसी गायकी में पदलालित्य साधते हुए सुर और लय की एकांगी आधीनता से छुटकारा पाया जाता है और स्वर और लय का संतुलित सुवार्नामध्य अपने ढंग से साधने की चेष्टा की जाती है |

कीधौं सुर को सर लगे, कीधौं सुर की पीर
कीधौं सुर को पद लग्यो, तन मन धुनत सरीर |

फिर वह संगीत पाश्चिमात्य symphony संगीत हो, jazz हो, film संगीत हो, या ध्रुपद की बानियाँ | संगीत की शैलियाँ इन तीन धाराओं के भीतर अपनी जगह, अपना स्थान बना लेती हैं |

घरानों के विस्तार क्रियाओं का सिलसिला, मूल्य, सौन्दर्यप्रणाली आदि के बारे में बहुत कुछ संगीतज्ञो और आलोचकों द्वारा लिखा कहा गया है | यह सब जो भी लिखा कहा गया है, वह पारम्पारिक ढंग के गायनप्रवाह की एक static, अडिग अवस्था को निश्चित कर, उस आधार पर ठोस नियम बना कर, उसके कायदे क़ानून बनाकर लिखा गया है | इन नियमों को प्रमाण मानते हुए, आत्मशोधहीन साधकों ने परंपराओं से जुडी हुई पुनर्विचार, पुनर्निर्माण की क्षमताओं को दुर्लक्षित कर परंपरा को एक रूढ़ी और कर्मकांड में परिवर्तित किया | संगीत के परिवर्तनशील प्रवाह में अटकाव निर्माण किया | घरानों का सांगीतिक बर्ताव एक निश्चित गानक्रिया समझने की परिणिति ही उस घराने का विशिष्ट रसभाव निश्चित करने पर उतर आई है |हकीकत में कलाकार और उनके अनुगामी दोनों अपनी कला प्रस्तुति में परिवर्तनशील रहे हैं | इसीलिए मैं कहना पसंद करूँगा कि विभिन्न घरानों के संस्थापकों के गायकी की, और उनके प्रतिभावान अनुगामियों के सांगीतिक स्वभाव की, मिजाज़ की आलोचना करें और कुछ अर्थग्रहण करें |

घरानों के रस कि बात करने के पहले थोडा घरानों के पारम्पारिक सौन्दर्यमूल्यों के परिवर्तनशील प्रवाह का इतिहास अवलोकित करना चाहूंगा |

ग्वालिअर घराने को सभी घरानों का उगम स्थान समझा जाता है | जो घराने का प्रतिनिधित्व करें, ऐसे समान स्वरवाक्य या उस दिशा से आवर्तन बांधने के सामान अंदाज़ ग्वालिअर घराने के विभिन्न गायकों के गायन में भी नहीं पाए जाते | कृष्णराव पंडित, ओंकारनाथ ठाकुर, वझेबुआ के शैली में कोई सामान स्वरवाक्य नहीं |

थोड़ी जयपुर घराने की बात करता हूँ | मेरे पिताजी वामंराव देशपांडे ने १९६२ में लिखित 'घरंदाज़ गायकी' नामक ग्रन्थ में जयपुर घराने के विस्तार क्रिया का गुणविशेष यह बताया, की एक बार स्थाई गाने के बाद विशुद्ध आकार में आलापी करके गानक्रिया का सातत्य रखें | यह आकार निर्गुण, निर्विकार (गौर करें, में निराकार नहीं कह रहा हूँ) हों और रसों की ऐन्द्रियता को एक क्षुद्र विकार मानता हो | फिर बोलबांट और बोल बनाव की बात दूर ही रही | और गुणविशेष हैं, कि ख्याल की लय एक ही रहे | द्रुत बंदिश का छछोरा श्रृंगार यहाँ पर नामंजूर है | जो शुरू में ऐसा गायन करतीं थीं, उन सुरश्री केसरबाई केरकर ने ही अपने इन मूल्यों में तबदीली कर अपने गायन में बोलबांट और सिधोश्वरी की पुकार भी लाई | गानतपस्विनी मोगुबाई कुर्डीकर ने, सुंदरता से ताल में गूंथी हुई लयदार बोलतानों को अपना बलास्थान बनाया | केसरबाई - मोगुबाई के सुगठित गानशिल्प की तराश देखकर अवाक रहना ही संभव है, लेकिन इसकी तुलना में मनसूर जी के गायन में पाया जाने वाला झकझोर उन्माद और बौरायापन पत्थर से फूट उमडने वाले पीपल्पत्ते की सुकुमार जिजीविषा का परिचय देती है|

अब्दुल करीम खांसाहब की लोकप्रिय १९३० के आसपास बनी हुई records के आधार पर हम समझ बैठे थे के उनका गाना शांतकरुण है | हाल ही में उनकी १९०६ की ध्वनिमुद्रिकाएं उपलब्ध हुई हैं | इन्हें सुनकर लगता है कि यह गायन कितना तैयार, आवेशपूर्ण और चैतन्यपूर्ण है | शायद उनका शांत और करुण रस वाला मिजाज़ उनके ढलती हुई उम्र की मानसिक अवस्था हो | आज के किराना घराने की शैली बहुत ही आक्रमक तानक्रिया से युक्त पाई जाती है |

आगरा घराने के गायकों की बंदिश कि कहन, फेंक, तिहाइयों कि उपज और आवेग, तार सप्तक के स्वरों कि पुकार, जैसे कोई आक्रंदन, नाला फूट पड़ा हो, और वह भी कैसे शब्दक्रीदा को लिए हुए | इन शब्दों की कहन आगरा – वृन्दावन के मिट्टी का मनोगंध भीतर समाए हुए है | यह बात आगरा घराने के एनी उपशाखाओं में नहीं है |

नग़्मा वो नग़्मा है
जिसे रूह सुनाए और रूह सुने
कहते कहते स्वरों कि शांत मद्धम ज्योति (वास्तव में शमा कहना चाहिए) कि धीमी आंच पर राग कि खिचड़ी पकाने वाले आमीरखां, उस ज्योति के धुंदले उजाले में भीतर की कालिख के तह की परतों को उलट पलट करते रहने वाले अमीरखां... जैसे के उस कालिख के गर्भगृह का अन्वेषण करते हों | अमीरखां साहब की कूटतानों की भूलभुलैय्या की संकरी गलियों में खुद को भुलाकर मैं आज भी उलझा रहता हूँ | इन मूल्यों को सही मानों में अनुगामित्व नहीं मिला | केवल निरर्थक फैलाव ही उनके अनुकरण के नाम से अपनाया गया |

कहते हैं, बड़े गुलाम अली खांसाहब का जमा हुआ सुन्दर ख्याल सुन लेने के बाद जब श्रोता उनकी ठुमरी सुनते थे, तो उन्हें लगता था के अब ही ये खिल उठे हैं | बड़े गुलाम अली कि ठुमरी सुनकर
मेरे पिताजी ने मराठी में लिखा था के इनकी ठुमरी सुनकर रति होती है, तब अब्दुल करीम खां कि ठुमरी सुनकर उपरति | इन्हें भी सही अनुगामित्व नहीं मिला | ये सब बातें हुई घरानों के संस्थापकों के गायन में पाए जाने वाले मिजाज़, रंग, रस की | मेरे विचार से, गायन में पाई जाने वाली स्वरवाक्य बनाकर आवर्तन बाँधने की तरकीब का अभ्यास होना चाहिए, **जिससे घराना या विशिष्ठ कलाविचार प्रस्थापित हो सकता है** | जिस रस में इन्होंने स्वरवाक्यों को भिगोया, वह उनका निजी स्वभाव है | उदहारण के तौर पर, अमीरखां साहब की गायकी एक सकारात्मक चैतन्य से गाई जा सकती है और मनसूर जी की गायकी शांत अंतर्मुखता से |

निरख रंग नीको, घोल निज घट को |
चढ़े तो रंग लागे फीको औरनके घट को |

हिन्दुस्तानी संगीत का documentation काफी साल करते हुए मैंने किसी भी घराने के उस्ताद या पंडित को कहते सुना नहीं की 'हमें वीर या करुण रस निर्माण करना है तो उस कदर षडज लगाओ' |

उच्च कला की अभिव्यक्ति विपुल मात्रा में उपलब्ध नहीं होती | बिरले गायक बिरले ही वक्त इसे साध लेते हैं | अभिजात संगीत में हास्य, भयानक और बीभत्स रस गायक को तो अभिप्रेत नहीं होते – श्रोता महसूस करें, तो बात और है | पर संगीत पर बतियाने में हास्य रस लाने में कोई आपत्ति नहीं |

इसीलिए मजाक की तौर पर कहता हूँ, ग्वालिअर में लश्कर, जयपुर में उदयपुर और किराने में पानीपत भी पाया जाता है | इस नाचीज़ की बात करूं, तो कुमारजी का निर्गुण विरक्त भाव मुझपर खिल नहीं उठता | हकीकत है, कुमारजी को अपनी जीवन यात्रा में निर्गुणी साधूओं का सहवास हुआ तो आफताब-ए-मौसिकी फैय्याज खां ने जोहराबाई आग्रेवाली के सोहबत-ए-रंगीं का फैज़ उठाया और वे वे रस्भाव उनके गायन शैली में उतर आए |

A rasik gets a flavour of the trance or the passion or the tranquility or the exitement of the innovative process that has captured the the spirit of the artist. The rasik derives pleasure from this phenomenon through his not-so-active and conviniently effort-free empathy. The rasik does not have the intention or the ability to demand or define the rasa of the performance he witnesses.

As per my understanding, the Rasa theory is a gross classification of the span of human emotions into nine broad categories. It served as an introduction to the contrasts in human emotions for the theater community, 2500 years ago. Employing it in the practice of music today is as good or bad or indifferent as restricting the musical sensibilities, sensitivities, subtleties and possibilities of the Raagas into 10 thaats.

जस कुरंग बिच (प्रात्यक्षिक)

कलाकृति, रागरूप और बंदिश अधूरा सच है | अपना आधा सच कलाकार उसमे मिलाता है, और आधा श्रोता|

कला से मानसिक अवस्था का उदात्तीकरण (sublimation) होता है | एक निरामय आनंद प्राप्त होता है | कोई भी कला आस्वादक का ध्यान उसके नित्य कर्मकांड से खींच कर एक मनो एक मयसभा के प्रति आकृष्ट करती है | शायद इसी से आस्वादक एक ताजगी, नया नजरिया या परिप्रेक्ष हासिल करता है |

- सत्यशील देशपांडे